जनवाचन आंदोलन

जन वाचन आंदोलन का मकसद है। किताबों को गाँव-गाँव ले जाना, इन किताबों को नवपाठकों के बीच पढ़कर सुनाना और पढ़वाकर सुनना। गाँव की जनता के पास आज भी पढ़ने-लिखने के लिए स्तरीय किताबें नहीं हैं और जो हैं भी वे बेहद महँगी हैं। भारत ज्ञान विज्ञान समिति ग्रामीण जन तक कम कीमत और सरल भाषा में देशभर के मशहूर लेखकों की किताबें पहुँचाना चाहती है, ताकि गाँव-गाँव में जन वाचन, पढ़ाई और पुस्तकालय संस्कृति पैदा हो सके। संपूर्ण साक्षरता अभियान से जो नवपाठक निकलकर सामने आए हैं, वे अपने साक्षरता के अर्जित कौशल को बनाए रख सकें, उनके सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक चेतना का स्तर बढ़े और वे जागरुक होकर अपने बुनियादी हकों की लड़ाई के लिए लामबंद हो सकें, यह इस अभियान का प्राथमिक उद्देश्य है। भारतीय लोकतंत्र की रक्षा के लिए गाँव के लोग आगे आएँ, इसके लिए भी इस तरह की चेतना का विकास जरूरी है। साक्षरता केवल अक्षर सीखने का काम नहीं है, यह पूरी दुनिया को जानने का काम है।
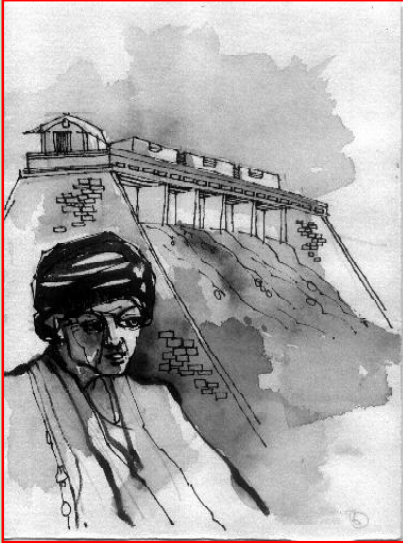
भारत ज्ञान विज्ञान समिति

मूल्य : 10 रुपये
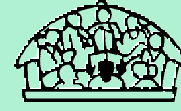
हमारे तालाब

मधु बी. जोशी
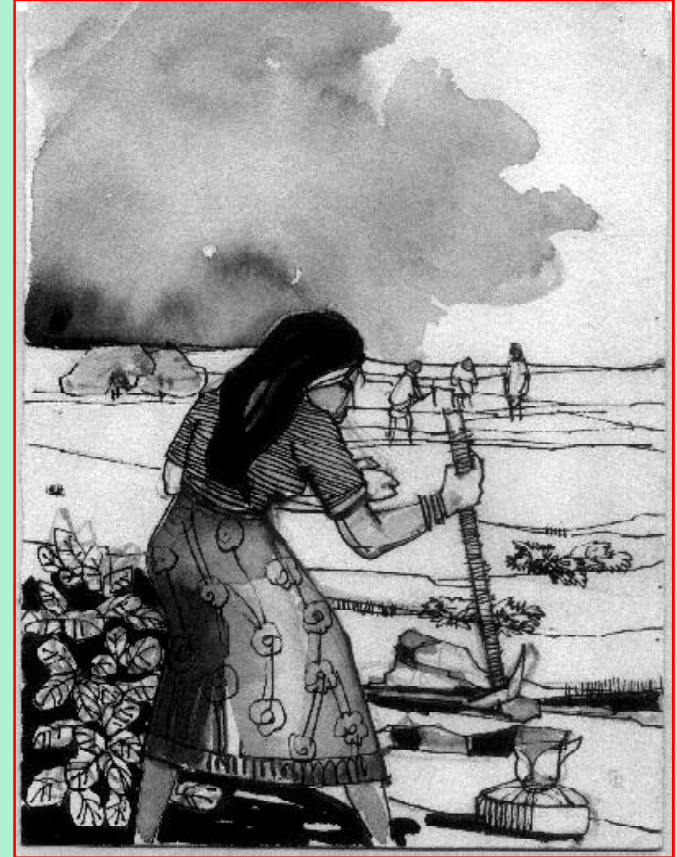
भारत ज्ञान विज्ञान समिति

हमारे तालाब : मधु बी. जोशी
Hamare Talab : Madhu B. Joshi

नवपाठकों के लिए भारत ज्ञान विज्ञान समिति द्वारा प्रकाशित

पुस्तकमाला संपादक: असद ज़ैदी और विष्णु नागर
कार्यकारी संपादक: संजय कुमार
Series Editor : Asad Zaidi and Vishnu Nagar
Executive Editor : Sanjay Kumar

रेखांकन: पंकज झा
लेजर ग्राफिक्स: अभय कुमार झा

प्रकाशन वर्ष: 1999, 2003

इस किताब का प्रकाशन भारत ज्ञान विज्ञान समिति द्वारा देशभर में चलाए जा रहे जन वाचन आंदोलन के तहत किया गया है ताकि लोगों में पढ़ने-लिखने की आदत पैदा हो सके। इस अभियान का मुख्य उद्देश्य गांव के पाठकों को सस्ती और सरल भाषा में देश के मशहूर रचनाकर्मियों द्वारा लिखी गई उत्कृष्ट पुस्तकें उपलब्ध करवाना है। खासकर उन नवपाठकों के लिए जो देशभर में चलाए गए संपूर्ण साक्षरता अभियान से निकलकर सामने आए हैं।

मूल्य:10 रुपये

Published by ***Bharat Gyan Vigyan Samithi****, **Basement of Y.W.A. Hostel No. II, G-Block, Saket , New Delhi - 110017, Phone : 011 - 26569943, Fax : 91 - 011 - 26569773, email: bgvs@vsnl.net***

हमारे तालाब
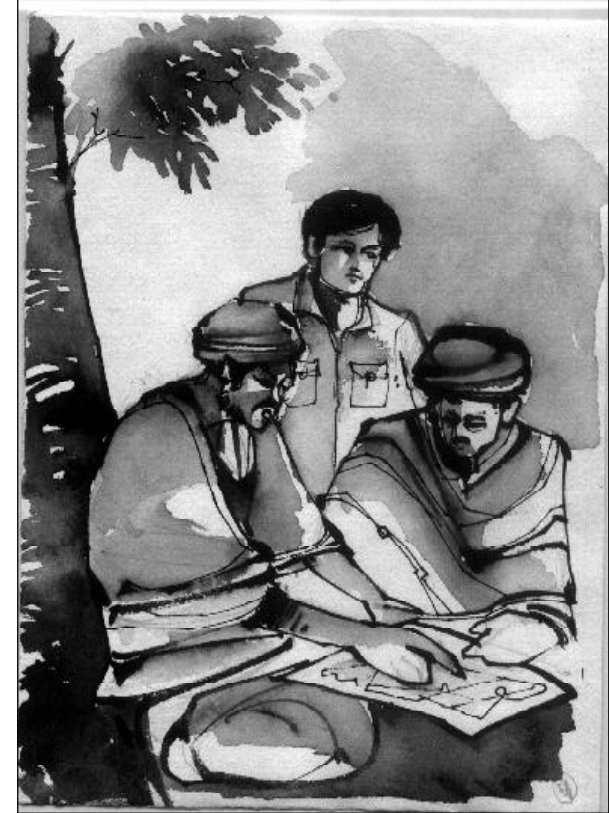
मधु बी. जोशी

हमारे तालाब

चार भाई थे–कूड़न, बुढ़ान, सरमन और कौंराई। चारों सुबह खेत पर काम करने जाते। दोपहर में कूड़न की बेटी उनके लिए खाना लेकर आती।

एक दिन बेटी के पाँव में एक नुकीले पत्थर से ठोकर लग गई। उसे बहुत गुस्सा आया। वह दराँती से पत्थर को उखाड़ने लगी। लेकिन पत्थर को छूते ही दराँती तो सोने की बन गई। हैरान लड़की दौड़ी–दौड़ी अपने पिता और चाचाओं को बुला लाई। कूड़न समझ गया कि उन्हें लोहे को सोना बना देनेवाला पारस पत्थर मिल गया है। उसे लगा कि यह पत्थर राजा को ही दे देना ठीक रहेगा। लेकिन राजा ने न पारस लिया, न सोना। उसने कूड़न से कहा: इससे अच्छे–अच्छे काम करते जाना, तालाब बनवाना। आज भी मध्यप्रदेश में पाटन में चारों भाइयों के नाम पर चार बड़े–बड़े तालाब हैं– बूढ़ा सागर, सरमन

सागर, कौंराई सागर और कुंडम सागर।

ऐसे अनगिनत किस्से हमारे देश के चप्पे–चप्पे में बिखरे हैं। और बिखरे हैं छोटे, बड़े, मंझोले तालाब। पानी जीवन का आधार है–इस बात को हमारे बड़े–बूढ़े खूब समझते थे। इसलिये
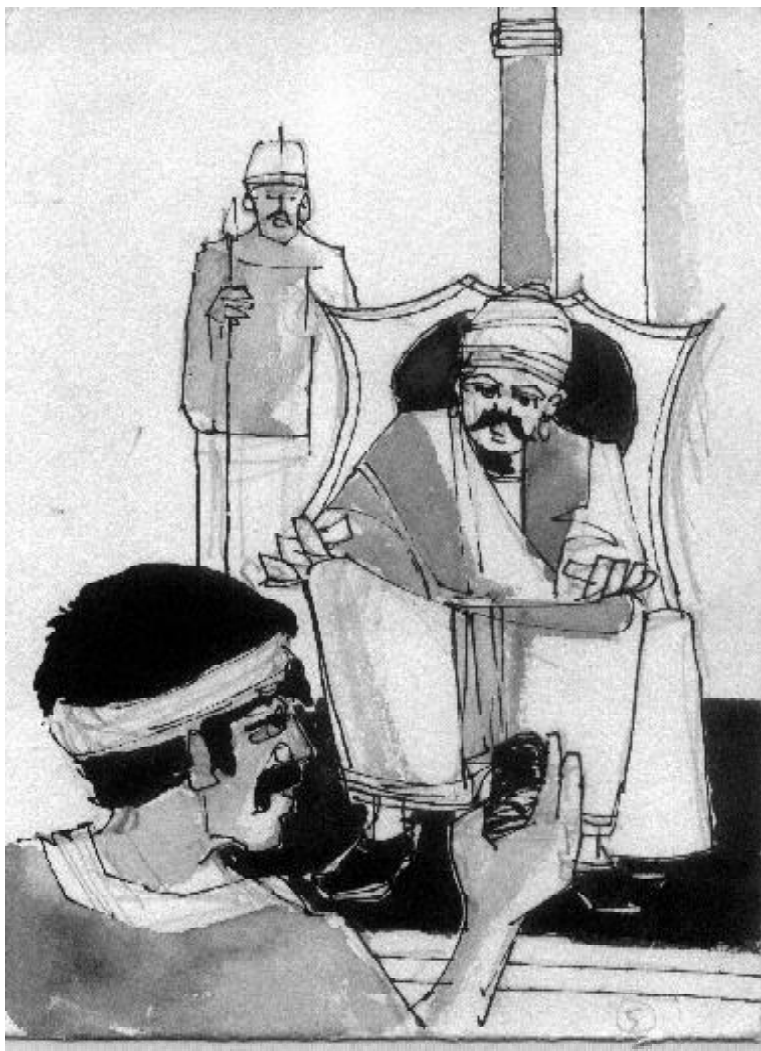
जहाँ भी पानी जमा किया जा सके वहाँ बारिश की एक-एक बूँद जमा कर लेते थे। यहाँ तक कि राजस्थान जैसे सूखे, रेतीले इलाके में भी ताल, तालाब, कुएँ, बेरियाँ बनाकर सालभर बारिश का पानी जमा कर रखा जाता था। करीब सौ बरस पहले दिल्ली में

ही 350 छोटे-बड़े तालाब थे।

तालाब बनाने के लिए लोग राजा और बादशाह से मदद नहीं माँगते थे। अपनी मदद वे खुद करते थे। तालाब किसानों, ग्वालों, बाबाओं-साधुओं ने बनवाए। सेठों-जमींदारों, विधवाओं, वेश्याओं और बनजारों ने भी बनवाए। जिसने भी तालाब बनवाया, समाज ने उसे महात्मा या सती का मान दिया। तालाब और उसके पानी को पवित्र माना।

तालाब का पानी पूरे गाँव के काम आता है, इसलिये तालाब बनाने के काम में भी पूरा गाँव जुटता है। तालाब बनाने का अनुभव रखनेवाले लोग एक ठीक जगह का चुनाव करते हैं। गाँव के बाहर, पशुओं के चरने की जगह, कोई ढाल वाली जगह वे चुनते हैं। वहाँ कोई शौच के लिये न जाता हो। मरे जानवरों की खाल न निकाली जाती हो। जहाँ से पानी आएगा, वहाँ की ज़मीन मुरुमवाली हो। तालाब की लंबाई, चौड़ाई, गहराई और उसकी हिफाजत का अंदाज अनुभवी लोग लगा लेते हैं।

कार्तिक के महीने में, जब फसल कट चुकी होती, सारा गाँव इकट्ठा होता। पूजा करके पाँच पंच खुदाई शुरू करते। दस हाथ मिट्टी के तसले पाल पर डालते। फिर गुड़ का प्रसाद बँटता। तालाब का नक्शा जमीन पर खोद लिया जाता और खुदाई शुरू हो जाती। सैकड़ों हाथ मिट्टी काटते। सैकड़ों हाथ पाल पर मिट्टी डालते। मिट्टी पर पानी डालकर उस पर बैल चलाए जाते, ताकि मिट्टी मजबूती से जम जाए। धीरे-धीरे पाल उठने लगती। पानी

का बहाव पाल को न तोड़ दे, इसलिए पाल से कुछ नीचाई पर तालाब का नेष्टा बनाया जाता। पाल भर जाए तो पानी नेष्टा से होकर बह जाएगा। कहीं-कहीं नेष्टा से नीचे की तरफ और तालाब भी बना दिये जाते। जीवन-जल की एक भी बूँद बेकार

न हो जाए ।

पाल और नेष्टा का काम पूरा हो गया। तालाब का आगर बन गया। एक बार फिर पूरा गाँव तालाब पर इकट्ठा होगा। काम पूरा हो गया है। आज सबका भोजन होगा। हर घर से रसद-अनाज आया है। तालाब पर घटोइया बाबा की प्रतिष्ठा कर दी गई है। तालाब का एक सुन्दर नाम रख दिया गया है। लोग एक बार फिर जमा होंगे-तालाब पर पहली बारिश का पानी भरते देखने के लिए। वे लाठी-बाँस, कुदाल-फावड़े लेकर घूमते हैं। जहाँ कहीं दरार दिखे उसे भरते हैं। चूहों के बिलों को मिट्टी भर कर दबाते हैं। पाल कमजोर पड़ जाए तो तालाब बच पाएगा क्या?

पहली बार तालाब में पानी भरा कि तालाब की रखवाली का, रख-रखाव का काम शुरू हो जाता है। तालाब के आसपास जूते पहन कर चलना, थूकना वगैरा जैसे काम कोई नहीं करता। पानी को साफ रखने के लिए उसमें पानी के पौधे लगाए जाते। गदिया, चीला, कुमुदिनी, निर्मली या चाकसू के पौधे पानी को साफ करते हैं। तालाब में मछलियाँ, केकड़े, कछुए और मगर तक डाले जाते। तालाब के पाल पर पीपल, पाकड़, बरगद, गूलर और फलदार पेड़ भी लगाए जाते। यह सब काम एक ही बार करने काफी रहते।

लेकिन बहते पानी के साथ मिट्टी भी आती है और तालाब की तलहटी में जमा होती रहती है। उसे निकालते रहने का इन्तजाम भी लोग खुद करते थे। अक्सर गर्मियों की शुरुआत में,

जब तालाब में पानी सबसे कम रहता, तब गाँव के सब लोग तालाब पर जुटते। किसान और कुम्हार तली की मिट्टी लेने के हकदार होते। वे मिट्टी काटकर अपने खेतों में डालते, बर्तन बनाते। कहीं-कहीं अब भी इसी मिट्टी से नहाने और सिर धोने का चलन है। मिट्टी लेकर लोग उसके बदले में अनाज या नकद पैसे पंचायत में जमा करते। इसी पैसे से तालाब की मरम्मत का काम होता। अक्सर गाँवों में तालाब के नाम पर कुछ जमीन या खेत छोड़े जाते। इस जमीन पर लगान नहीं लगता था। इस बचत से भी तालाब और पानी का इंतजाम करनेवाले लोगों को उजरत दी जाती। अमावस और पूनो के दिन किसान अपने खेतों में काम नहीं करते थे। उन दिनों वे अपने आसपास के तालाबों की मरम्मत और देखभाल करते।

यह तो बात हुई उन इलाकों की जहाँ पानी अच्छा बरसता है। लेकिन राजस्थान के रेतीले इलाकों में बारिश कम होती है। जो भी होती है वह जमीन में समा जाती है। इन इलाकों में जमीन के नीचे मिलने वाला पानी खारा होता है। लेकिन इन इलाकों में कहीं-कहीं रेत के नीचे-नीचे खड़िया पत्थर की एक पट्टी चलती है। यह पट्टी पंद्रह-बीस से लेकर पचास-साठ हाथ तक की गहराई पर होती है। खड़िया पत्थर की यह पट्टी बारिश के पानी को जमीन के नीचे मौजूद खारे पानी से नहीं मिलने देती। ऐसे इलाकों में बहुत कम चौड़े मुँह वाली कुँइया बनाई जाती हैं। इन कुँइयों से दिन भर में दो या तीन घड़े ही मीठा पानी मिल पाता

है। खड़िया पत्थर की पट्टी काफी लंबे हिस्से से गुजरती है इसलिए उस हिस्से पर कुँइयों की कतार-सी बनती चली जाती है। हर घर की एक-दो कुँइयाँ।

ऐसे रेतीले इलाकों में जहाँ पानी एक-दो सौ हाथ से भी

ज्यादा गहराई पर और खारा निकलता है, कुडियाँ बनाई जाती हैं। जहाँ जितनी भी जगह मिल सके, वहाँ गारे-चूने से लीपकर एक ढलानदार आँगन आगोर बनाया जाता है। ढालने वाले हिस्से में खुदाई करके कुंडी बनती है। पानी रिसे नहीं इसलिए कुंडी के

अंदर पक्की चिनाई का काम किया जाता है। आगोर से बहकर आए पानी को सालभर रखा जाना है, इसलिए आगोर की सफाई का खास ख्याल रखा जाता है। कुंडियों को ढँक कर रखा जाता है। कभी-कभी सम्पन्न परिवार सार्वजनिक उपयोग के लिए बड़ी-बड़ी कुंडियाँ बनवाते हैं। लेकिन इनमें भी गाँव के सभी घरों की मेहनत लगती है। घरों की छतों पर बारिश का पानी जमा करके नीचे आँगन में बनी टंकी में भी जमा किया जाता है। तब इसे टाँका कहते हैं। ऐसे कई कुंड और टाँके राजस्थान के गाँवों कस्बों में आज भी साल भर मीठा पानी दे रहे हैं।

चरवाहों, मुसाफिरों की सुविधा के लिए, कई लोग वीराने में भी टाँके बनवाते थे। ऐसे टांके में आठ दस लोग आराम भी कर सकते थे। जयपुर के पास जयगढ़ किले का टाँका करीब 350 साल पहले बना था। इसमें साढ़े तीन करोड़ लीटर पानी समाता है।

राजस्थान में नमक की झीलों के आसपास के इलाकों में जमीन तक खारी है। यहाँ बारिश का पानी जमीन पर गिरते ही खारा हो जाता है। लेकिन यहाँ आज भी चार-पाँच सौ साल पुरानी तलाइयाँ हैं जिनमें मीठा पानी भरा रहता है। इन तलाइयों का आगोर खारी धरती से चार-पाँच हाथ ऊपर उठा बनाया जाता था। यह तलाइयाँ नमक का कारोबार करनेवाले बनजारों की बनवाई हुई हैं।

जैसलमेर में करीब सात सौ साल पुराना घड़सीसर है।

इसे जैसलमेर के महारावल घड़सी ने बनवाया था। तालाब की खुदाई–भराई के कामों में घड़सी खुद लगे थे। तालाब को बनवाते हुए ही वे मारे भी गए। इसी घड़सीसर पर टीलों नाम की वेश्या

का बनवाया सुन्दर प्रवेशद्वार टीलों की पोल भी है। घड़सीसर से नौ तालाब और कई बेरियाँ जुड़े थे। पानी की एक–एक बूँद को सम्हालने का इंतजाम किया गया था। आज भी घड़सीसर जैसलमेर शहर के ज्यादातर हिस्से को पानी पिलाता है।

जहाँ पानी होगा वहीं खेती भी होगी। राजस्थान की ज्यादातर नदियाँ बारहमासी नहीं हैं। लेकिन अनुभवी लोगों ने कई ऐसी जगहें ढूँढ निकालीं जहाँ इनका पानी रोका जा सकता है। दो तरफ मिट्टी की पाल उठाकर तीसरी तरफ पत्थर की मजबूत चिनाई की दीवार (चादर) बनाई जाती है। यूँ एक खडीन तैयार हो जाती है। कई खडीनें छह सात किलोमीटर तक लंबी हैं। चौमासे में पानी खडीन में भरा रहता है, बाद में धीरे–धीरे सूख जाता है। लेकिन खडीन की मिट्टी नम रहती है। तब खडीनों में गेहूँ बोया जाता है। जैसलमेर, बाड़मेर और जोधपुर में ज्यादातर गेहूँ की खेती खडीनों में ही होती है।

आज पानी को सम्हालने के लिये बड़े–बड़े बाँध बनते हैं। उन बाँधों को बनाने में बड़े–बड़े इंजीनियर बड़ी–बड़ी मशीनें लेकर जुटते हैं। लेकिन जब इंजीनियर और मशीनें नहीं थीं तब किसने बनाए थे बाँध, तालाब, खडीनें और बावड़ियाँ? राजस्थान में गजधर यह काम करते थे–वे पूरे काम की लागत निकालते, सामान जुटाते और महलों, मन्दिरों से लेकर कुँएँ बावड़ियाँ तक बनवाते। कुँएँ की खुदाई, चिनाई चेजारो या चेलवांजी करते। वे सिलावट या सिलावटा पत्थरों की कटाई–चिनाई में माहिर थे।

इन्हें सिलाकार और सलाट भी कहा जाता है। पथरोट, टकारी, थवई और सुथार भी इमारतें, तालाब बनाते थे। मिट्टी की परख करके उसकी ईंटे बनाने और चिनाई करनेवाले लोग मटकूट, मटकूड़ा, सोनकर, राजलहरिया, और खंती कहलाते हैं। कहीं-कहीं कुम्हार भी तालाब की मिट्टी के बारे में सलाह देते हैं।

तालाब की जगह के चुनाव में माहिर थे ढेर, बुलई, मिर्घा। ईंट और चूने के गारे का काम चुनकर करते थे, यही लोग नमक का व्यापार भी करते थे। लुनिया, मुरहा और सांसिया भी यही काम करते थे। मुसहर, दुसाध, नौनिया, गोंड, परधान, कोल, ठीमर, ढींवर, भोई, कोरी और कोली जातियाँ भी तालाब बनाने वालों में से थीं। भील, भिलाले सहरिया और कोल कभी छोटे-मोटे राजा थे। ये लोग तालाब और बाँध बनाने में भी बहुत कुशल थे। ओड़ लोग उत्तर प्रदेश से लेकर उड़ीसा और महाराष्ट्र
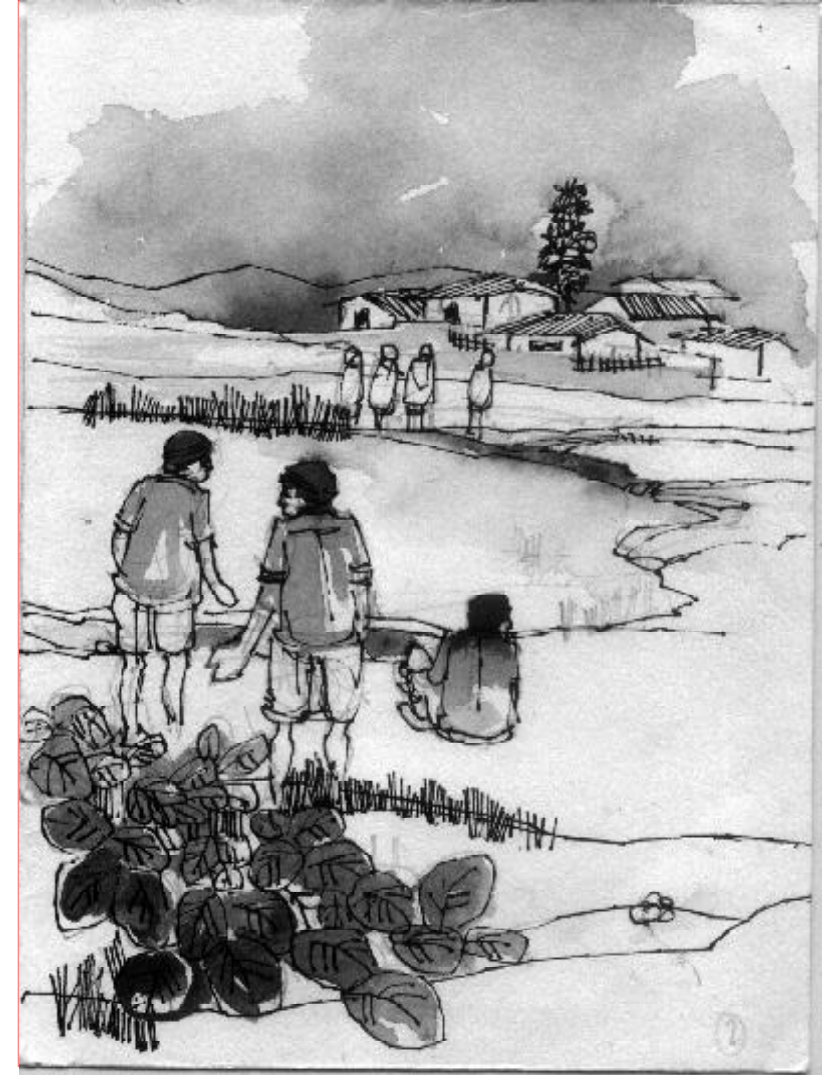
तक फैले थे। ये मिट्टी के अच्छे जानकार थे और तालाब बनाते थे। सिंचाई के लिए पानी का बँटवारा करने का काम दक्षिण में नीरघंटी करते थे जो कि हरिजन ही हो सकते थे। लेकिन पालीवाल, पुष्करणा और चितपावन ब्राह्मण भी तालाब बनाने की जानकारी

रखते थे और तालाब बनाते भी थे। मध्यप्रदेश में छत्तीसगढ़ के रामनामी समाज ने पूरे क्षेत्र को तालाबों से भर दिया था।

यह सभी जातियाँ आज पिछड़ी और अनुसूचित कही जाती हैं। लेकिन भारतीय समाज इन्हीं के कौशल से आज फलफूल सका है।

[यह आलेख अनुपम मिश्र की लिखी ''आज भी खरे हैं तालाब'' और ''राजस्थान की रजत बूँदें'' पर आधारित है। इन किताबों को प्रकाशित किया है गाँधी शान्ति प्रतिष्ठान ने।]

लहू का रंग एक है

लहू का रंग एक है अमीर क्या गरीब क्या
बने हैं एक खाक से तो दूर क्या करीब क्या
वही है तन वही है जां तो कब तलक छिपाओगे
पहन के रेशमी लिबास तुम बदल न जाओगे
कि एक जाति है सभी अवर्ण क्या सवर्ण क्या
लहू का रंग एक है ------

गरीब हैं वो इसलिए कि तुम अमीर हो गए
कि एक बादशाह हुआ तो सौ फकीर हो गए
खता है ये समाज की भले बुरे नसीब क्या
लहू का रंग एक है ------

जो एक है तो क्यूँ न फिर दिलों के दर्द बाँट लें
लहू की प्यास बाँट लें रगों का दर्द बाँट लें
लगा लो सबको तुम गले हबीब क्या रकीब क्या
लहू का रंग एक है -------